विक्रम संवत-२०३६, भाद्र शुक्ल - ९, गुरुवार, तारीख १८-९-१९८०
वचनामृत -३९३ प्रवचन-३७

आज पाँचवाँ धर्म। पाँचवाँ दिन है न? सत्य धर्म। उत्तम सत्य धर्म का पाँचवाँ दिन है।

णिवयणमेव भासदि, तं पालेदुं असक्कमाणो वि।
ववहारेण वि अलियं, ण वददि जो सच्चवाई सो॥३६८॥

जिनवचन में जो कहा है, उसे बराबर मानना, जानना। अपने से पल सके नहीं तो उस दोष को दोष जानना। है न? **तं पालेदुं असक्कमाणो** आचार आदि पालना अशक्य हो। सेठ नहीं आये हैं? समझ में आया? अपनी शक्ति अनुसार पाले। परन्तु अशक्ति हो तो छिपाये नहीं कि हमारा दोष नहीं है। दोष को दोष बराबर जाने। और दोष को दोष बराबर कहे। शास्त्र में लेख है, अष्टपाहुड़ में, कि चरित्रभट्टा सिझंती, दंसणभट्टा न सिझंति। चारित्रदोष है, अन्दर लगता हो... आये, सेठ आये। चारित्रदोष लगता हो तो वह तो सिझंति। मुक्ति में जाएगा। क्योंकि ख्याल में है। वह दोष ख्याल में है। परन्तु दंसणभट्टा- जो श्रद्धा से भ्रष्ट है, वास्तविक वीतरागतत्त्व, परमात्मा ने कहे तत्त्व से विरुद्ध कुछ भी हो तो वह तो संसार मे भटकेगा। क्या कहा, समझ में आया?

जिनवचन में जो कहे **उसमें जो आचार आदि कहा गया है, उसका पालन करने में असमर्थ हो...** पालन करने की शक्ति न हो तो उसे छिपाये नहीं। सत्यवादी है न। अपना दोष लगा हो, उसे छिपाये नहीं। क्योंकि ऐसा सिद्धान्त है कि चरित्तभट्टा सिझंति। अष्टपाहुड़ में पहले दर्शनपाहुड़ में है कि कदाचित् कोई चारित्रभ्रष्ट हो, चारित्र में दोष हो तो वह तो सिझंति। क्योंकि उसके ख्याल में है कि यह दोष है। परन्तु दंसणभट्टा न सिझंति। आहाहा! जो श्रद्धा-भ्रष्ट है, श्रद्धा की मूल में भूल है, उसकी कभी मुक्ति होगी नहीं। आहाहा! समझ में आया?

सिद्धान्त में ऐसा लेख है। दर्शनपाहुड़, अष्टपाहुड़, कुन्दकुन्दाचार्य। चरित्तभट्टा सिझंति। चारित्र में दोष लगा हो तो उसे ख्याल में है तो वह तो छोड़कर मुक्ति होगी। परन्तु दंसणभट्टा न सिझंति। परन्तु श्रद्धा भ्रष्ट है उसकी मुक्ति कभी नहीं होती। दंसणभट्टा, भट्टा ज्ञानभट्टा, चरित्तभट्टा। दर्शनभ्रष्ट है (अर्थात्) वास्तविक तत्त्व की स्थिति से वह तो दर्शन से भ्रष्ट है, ज्ञान से भ्रष्ट है, चारित्र से भ्रष्ट है। ऐसा पाठ है। आहाहा! उसकी तो लोगों को दरकार नहीं है कि दर्शन क्या (है)? क्रिया पर लक्ष्य। बाहर की यह क्रिया, बाहर की वह क्रिया, बाहर की यह क्रिया। यहाँ कुन्दकुन्दाचार्य दर्शनपाहुड़ में तो यह स्पष्ट बात करते हैं। मुनिव्रत धारण (किया है) और मुनि ऐसा कहे कि चरित्तभट्टा सिझंति। सम्यग्दर्शन है। अपना अनुभव आत्मा का भान है मैं शुद्ध चैतन्य हूँ, फिर भी पर्याय में चारित्र का दोष लगता है। विषय की वासना, क्रोध, मान, लड़ाई का भाव ऐसा समकिती को भी आता है। आहाहा! तो भी ऐसे भगवान कुन्दकुन्दाचार्य कहते हैं, वह दोष है, फिर भी चरित्तभट्टा सिझंति। क्योंकि उसके ख्याल में है। ज्ञान में है कि यह दोष है, वह आदरणीय नहीं है। कर्म के निमित्त की प्रेरणा से अपने में अपने अपराध से विकार हो गया। ऐसा ज्ञानी को ख्याल में है। आहा..! विकार हुआ है फिर भी, चारित्रदोष है, फिर भी कुन्दकुन्दाचार्य दर्शनपाहुड़ में कहते हैं कि चरित्तभट्टा सिझंति। वह दोष उसके ख्याल में है कि मेरे में यह दोष है, वासना उठी है, इस प्रकार का राग है। दंसणभट्टा न सिझंति। आहाहा! सत्य यह है, सत्य धर्म यह है। आहाहा!

ऐसा भगवान ने कहा उससे कुछ भी किंचित् भी फेरफार, एक अक्षर का भी फेरफार हो तो वह मिथ्यादृष्टि है। आहा..! अष्टपाहुड़ में लिखा है, भाई! अष्टपाहुड़ में सूत्रपाहुड़ है न? वहाँ विस्तार किया है। विस्तार से लिखा है और मूल पाठ में है। सिद्धान्त जो वीतराग सर्वज्ञ परमात्मा ने कहा, उसमें एक अक्षर भी मान्यता में फेरफार है, सत्य से विरुद्ध (मान्यता है).. आहाहा! तो वह भ्रष्ट है, श्रद्धा से भ्रष्ट है। परन्तु चारित्रभ्रष्ट में अपने में ख्याल में है कि यह दोष है। अपने में क्रोध आता है, थोड़ा राग आता है, विषयवासना भी समकिती को आ जाती है। आहाहा! खबर है, ख्याल है। शास्त्र कहते हैं कि चरित्तभट्टा सिझंति। सेठ! उसके ख्याल में है, उसकी श्रद्धा में है कि मेरे में चारित्रदोष में फेरफार हो गया। फिर भी उसकी मुक्ति होगी। क्योंकि उसके ख्याल में है तो वह छोड़ देगा। परन्तु

जिसको श्रद्धा का ख्याल ही नहीं है कि क्या चीज़ है और एक अक्षर भी विपरीत हो, ऐसा पाठ है। आहाहा! सिद्धान्त में जो कहा.. सूत्रपाहुड़ में पाठ है। अष्टपाहुड़ है, उसमें दूसरा सूत्रपाहुड़ है। उसमें एक अक्षर भी जो भगवान ने कहा, उसमें फेरफार माने.. आहा..! तो असत्य माननेवाला श्रद्धा से भ्रष्ट है तो उसकी कभी मुक्ति होगी नहीं। वह सत्य धर्म है। जैसा सत्य है, ऐसी श्रद्धा करता है। परन्तु चारित्र में दोष हो तो भी छोड़ेगा और क्रमशः (मुक्ति में जाएगा)।

श्रेणिक राजा। क्षायिक समकिती। हजारों रानियाँ। हजारों राजा चँवर ढाले। फिर भी समकिती (है)। आहाहा! फिर भी समय-समय में तीर्थंकरगोत्र बाँधते हैं। क्या कहा? ओहोहो! ऐसे राग में पड़े हैं, स्त्री आदि में विषय में पड़े हैं, फिर भी समय-समय में क्षायिक समकिती आत्मज्ञानी यथार्थ है तो समय-समय में तीर्थंकरगोत्र बाँधते हैं। ऐसे दोष के काल में भी तीर्थंकरगोत्र बाँधते हैं। आहाहा! क्योंकि सत्य ख्याल में है। सत्य की यथार्थ प्रतीति का अनुभव है। तो दोष है, वह उसके ख्याल में है। वह दोष छोड़ेगा और चारित्र निर्मल करेगा और मोक्ष होगा। परन्तु श्रद्धा में थोड़ा भी फेरफार हो... आहाहा! जो भगवान ने कहा, उससे कुछ भी दूसरा माने तो उसको धर्म होता नहीं, मोक्ष होता नहीं। यह सत्य धर्म है।

वचनामृत-३९३। ३९३ न? ३९३ है। फिर से लेते हैं, फिर से पहले से। ३९३। **जिसे भवभ्रमण से सचमुच छूटना हो,...** ३९३। प्रथम पंक्ति। **जिसे भवभ्रमण से सचमुच...** सचमुच, हों! ऐसे कहे कि हमें भवभ्रमण नहीं करना है और हमें जन्म-मरण से (छूटना है), ऐसा तो बोले। उसमें कथन में क्या? **जिसे भवभ्रमण से सचमुच छूटना हो,...** यथार्थपने उसे भव लेना ही नहीं है, भव करना ही नहीं है। ऐसी अन्तर दृष्टि में जिसकी दृष्टि है, **उसे अपने को परद्रव्य से भिन्न...** आहाहा! शरीर, वाणी, कर्म से तो भिन्न, स्त्री, कुटुम्ब, परिवार, लक्ष्मी, इज्जत, मकान, व्यापार-धन्धे से समकिती तो भिन्न है। आहाहा! व्यापार होता है परन्तु अन्दर में स्वामीपना नहीं होता। अज्ञानी को तो स्वामीपना होता है। हम करते हैं, हम करते हैं, हमारा है। हमारा आचरण है, हमारा धन्धा है, हमारा व्यापार है। हम व्यवस्थापक, हम बराबर व्यवस्था करते हैं। वह मिथ्यादृष्टि अज्ञानी है। वह जैन नहीं। उसे जैन की श्रद्धा नहीं है। आहाहा! ऐसी बात है।

वह कहते हैं कि **अपने को परद्रव्य से...** परद्रव्य में तो स्त्री, कुटुम्ब, परिवार, लक्ष्मी... अरे..! देव, गुरु और शास्त्र भी परद्रव्य में आये। **परद्रव्य से भिन्न पदार्थ निश्चित करके,...** परपदार्थ से, मैं बिल्कुल भिन्न हूँ। मेरे में राग, शरीर, कुटुम्ब, धन्धा, व्यापार, पैसा का कोई सम्बन्ध नहीं है। वह चीज़ बिल्कुल भिन्न है, मैं बिल्कुल भिन्न हूँ। ऐसा निश्चित करके **अपने ध्रुव ज्ञायकस्वभाव की महिमा लाकर,...** आहाहा! बहुत अच्छी बात है। **अपने ध्रुव ज्ञायकस्वभाव की महिमा लाकर,...** पर्याय है। परन्तु वह पर्याय ध्रुव का निर्णय करती है। आहा..! ध्रुव ज्ञायकभाव की महिमा। महिमा करनेवाली पर्याय है। महिमा करना है ध्रुव की। आहाहा! क्या? त्रिकाली ज्ञायकस्वरूप भगवान चैतन्यमूर्ति आनन्दकन्द प्रभु, उसका श्रद्धान करना है, उसकी महिमा लाकर। महिमा करता है पर्याय में, महिमा करता है पर्याय-अवस्था में, परन्तु महिमा करता है ध्रुव की। आहाहा! सम्यग्दर्शन प्रगट होता है। तब उसको सम्यग्दर्शन प्रगट (होता है)। अभी तो धर्म की प्रथम सीढ़ी। आहाहा! है न? **सम्यग्दर्शन प्रगट करने का प्रयास करना चाहिए।** आहाहा!

यदि ध्रुव ज्ञायक-भूमि का आश्रय न हो... आहाहा! मुद्दे का माल है। यदि ध्रुव त्रिकाली भगवान नित्यानन्द अतीन्द्रिय आनन्द का कन्द प्रभु, उसका—ज्ञायक भूमि का आश्रय न हो, उसका जिसको आलम्बन नहीं, अन्तर का आश्रय नहीं, त्रिकाली ज्ञायकभाव भगवान आत्मा, उसका जिसको अवलम्बन नहीं-आश्रय नहीं, उस ओर झुकना नहीं है, समीपता नहीं है, आहाहा! वह **जीव साधना का बल...** वह जीव साधना का साधन, मोक्ष का साधन, वह **साधना का बल किसके आश्रय से प्रगट करेगा?** आहाहा!

मुमुक्षु :- अनुभव की बात है।

पूज्य गुरुदेवश्री :- मुद्दे की रकम है। आहाहा! बहिन बोले थे। आहा!

क्या कहते हैं? अपना ध्रुव त्रिकालीस्वभाव वर्तमान पर्याय है। वह पर्याय त्रिकाल का निर्णय करती है, अनुभव करती है। त्रिकाली जो ध्रुव स्वभाव, उसका पर्याय निर्णय करती है। और **यदि ध्रुव ज्ञायक-भूमि का आश्रय न हो...** ऐसा त्रिकाली भगवान आत्मा ध्रुव ज्ञायकस्वरूप, उसका आश्रय न हो तो जीव साधना का बल-धर्म का साधना का बल, मोक्षमार्ग की साधना का बल किसके आश्रय से प्रगट करेगा? आहाहा! समझ में आया?

मुद्दे की रकम है। दरकार कहाँ दुनिया को पड़ी है। अरेरे.. ! अनन्त-अनन्त भव कर-करके मर गया। और अभी जिसको अनन्त भव करने हैं,... भवभ्रमण से सचमुच छूटने का भाव हो, उसकी बात है। आहा.. !

यहाँ कहते हैं, अन्तर में ध्रुव स्वरूप भगवान, उसका—ज्ञायक-भूमि का आश्रय न हो... आहाहा! नित्यानन्द प्रभु का अवलम्बन न हो, नित्य ध्रुवस्वरूप का आधार-आश्रय-अवलम्बन... आहाहा! न हो तो जीव साधन का बल, अपने मोक्षमार्ग की साधना का बल किसके आश्रय से प्रगट करेगा? प्रगट तो जो ध्रुव है, उसको दृष्टि में लेगा तो मोक्षमार्ग प्रगट होगा। ध्रुव लक्ष्य में लेकर प्रगट मोक्षमार्ग होगा। पर्याय, राग, दया, दान लक्ष्य में रहेगा तो संसार भटकने में है। आहाहा! मुद्दे की रकम है। आहाहा! क्या कहा?

अपनी चीज़ जो त्रिकाली ध्रुव है, उसका यदि आश्रय न हो तो जीव मोक्षमार्ग का साधन किसके आश्रय से करेगा? आहाहा! है? **बल किसके आश्रय से प्रगट करेगा?** क्या? साधना का बल। बहुत संक्षेप में शब्द हैं। साधना का बल का अर्थ?-स्वरूप शुद्ध चैतन्य ज्ञायक, उसकी दृष्टि करके पर्याय में जो बल उत्पन्न हुआ - मोक्ष का मार्ग; तो यदि ध्रुव का आश्रय है नहीं, ध्रुव का अवलम्बन है नहीं, वह किसके आश्रय से साधना का बल, मोक्षमार्गरूपी साधन। मोक्षमार्ग का साधन किसके आश्रय से करेगा? किसके आश्रय से प्रगट मोक्षमार्ग करेगा? आहाहा! ऐसी बात। पूरी दुनिया भटकने में पड़ी है। अरेरे.. !

यहाँ तो कहते हैं, अन्दर भगवान ध्रुव.. आहा.. ! नित्यानन्द प्रभु की दृष्टि प्रगट करके समकित प्रगट करना। यदि ऐसे ध्रुव ज्ञायकभाव का आश्रय न हो तो आत्मा साधना का बल, मोक्षमार्ग की साधना का बल किसके आश्रय से प्रगट करेगा? किसके अवलम्बन से प्रगट करेगा? किसके आधार से पर्याय में उत्पन्न होगा? आहाहा! लोगों ने दरकार की नहीं। जहाँ-तहाँ मिला उसमें (घुस गये)। उसमें पैसे दो, पाँच, दस करोड़ मिले.. मर गया, वहीं अटक गया। आहाहा! और इज्जत-कीर्ति धूल.. धूल। आहाहा!

क्या कहते हैं? बहुत ही संक्षिप्त शब्दों में (कहते हैं), आत्मा सचमुच भवभ्रमण से रहित होने का भाव हो तो एक त्रिकाली ध्रुव का अवलम्बन लाकर सम्यग्दर्शन प्रगट करना और उस ध्रुव ज्ञायकभाव के आश्रय बिना मोक्षमार्ग का बल, सम्यग्दर्शन-ज्ञान का बल है,

वह किसके आश्रय से प्रगट करेगा? ध्रुव के अवलम्बन बिना किसके आश्रय से प्रगट करेगा? सेठ! भाषा संक्षेप में है, परन्तु माल। आहा..! प्रभु! तेरी अन्दर प्रभुता पूर्ण पड़ी है। एक समय की पर्याय उस प्रभुता का आश्रय न ले.. आहाहा! एक समय की वर्तमान दशा त्रिकाल ज्ञायकस्वभाव का आश्रय न ले, प्रभु! किसके आश्रय से वह साधन का बल प्रगट होगा? ध्रुव के आश्रय बिना तो साधन का बल प्रगट होगा नहीं। आहाहा! समझने में, सुनने में कठिन लगे। आहाहा! समझ में आया?

पर्याय और राग-द्वेष के आश्रयसे तो धर्म होता नहीं। शरीर के आश्रय से तो होता नहीं, ये तो परद्रव्य है। वह तो पहले कहा। कहा न? **अपने को परद्रव्य से भिन्न पदार्थ निश्चित करके,...** यह पहले कहा। आहाहा! स्त्री, कुटुम्ब-परिवार, लक्ष्मी, शरीर-मिट्टी-धूल, वाणी सब परद्रव्य है। **परद्रव्य से भिन्न पदार्थ निश्चित करके,...** दूसरी पंक्ति है न? **अपने ध्रुव ज्ञायकस्वभाव की महिमा लाकर,...** आहाहा! अपना नित्यानन्द प्रभु ज्ञायकभाव, उसकी महिमा लाकर **सम्यग्दर्शन प्रगट करने का प्रयास करना चाहिए।** आहाहा! मुद्दे की रकम है। आज सत्य धर्म का दिन है। पाँचवाँ दिन। पाँचवाँ है न आज? सत्य धर्म। आहाहा!

कहते हैं कि सत्य धर्म सत्य ध्रुव के अवलम्बन बिना किसके अवलम्बन से प्रगट करेगा? आहाहा! पर्याय में सत्य धर्म-सम्यग्दर्शन, ज्ञान, चारित्र मोक्ष का मार्ग, वह शुद्ध ध्रुव ज्ञायकभाव के अवलम्बन बिना किसके आश्रय से साधना का बल प्रगट करेगा? आहाहा! भाषा बहुत संक्षेप में है, भाव बहुत गम्भीर है। आहा..! इसको पढ़कर तो अन्यमति वैष्णव लोग पढ़कर... आहाहा! कल दोपहर को ऐसा सपना आ गया कि एक साधु आया और एक आदमी आया। तो साधु ऐसा बोला कि यह वचनामृत क्या चीज़ है! आहाहा! सपने में। कल दोपहर में थोड़ी झपकी आ गयी। कल दोपहर को। वह साधु ऐसा बोला, गोपनाथ में बोला न? तो वह अन्दर से आ गया। वह वचनामृत क्या है! आहा..!

यहाँ कहते हैं, प्रभु! तुझे भवभ्रमण से सचमुच छूटने का भाव हो, भवभ्रमण से छूटने का सचमुच भाव हो तो ज्ञायकस्वभाव ऐसा त्रिकाली ध्रुव, उसके अवलम्बन से सम्यग्दर्शन प्रगट होगा। आहाहा! और उसके अवलम्बन बिना, प्रभु! अनन्त का नाथ प्रभु अन्दर ध्रुव, अनन्त ज्ञान, अनन्त दर्शन, अनन्त आनन्द सर्वांग अतीन्द्रिय आनन्द से भरा

पड़ा प्रभु, उसका अवलम्बन बिना किसके बल से तू मोक्ष के मार्ग का साधन करेगा? आहाहा! यह बड़ी बात है, छोटाभाई! आहाहा! प्रभु! तू छोटा नहीं है, नाथ! बड़ा है प्रभु अन्दर। आहाहा! अरे..! तू उस बड़े का आश्रय न ले, अरे..! अकाल पड़ता है न? अकाल। तो बड़े का आश्रय लिये बिना गरीब आदमी बारह महीने निर्वाह कैसे करेगा? पाठ है न शास्त्र में। अकाल पड़ता है न? अकाल। पैसा नहीं, कमाई नहीं, फसल नहीं (होती)। तो बड़े गृहस्थ का आश्रय बिना बारह महीने का निर्वाह कैसे करेगा? आहाहा! ऐसे बड़ा ध्रुव भगवान आत्मा, तेरी पर्याय में अकाल पड़ा है, प्रभु! आहाहा! अरे..! तुझे तेरी खबर नहीं है, प्रभु! तेरी पर्याय में अकाल है। आहाहा! उस अकाल का नाश करने का और सम्यग्दर्शन आदि मोक्षमार्ग प्रगट करने का सुकाल ध्रुव का आश्रय बिना किसके आश्रय से करेगा? आहाहा..! है तो पर्याय (आश्रय) करती है। क्या कहते हैं? अवलम्बन तो पर्याय करती है। ध्रुव अवलम्बन नहीं लेता। ध्रुव तो ध्रुव है, कायम है। आहाहा! अरे.. पर्याय क्या और ध्रुव क्या? पर्याय बिना का द्रव्य तो कभी तीन काल में एक समय होता नहीं। आहाहा! वह तो कल आ गया – सामान्य-विशेष स्वरूप। विशेष बिना तो सामान्य त्रिकाल द्रव्य कभी होता नहीं। कभी होगा नहीं। विशेष जो पर्याय है... आहाहा! वह यदि ध्रुव द्रव्य का अवलम्बन न ले तो किसके आश्रय से तुझे धर्म का बल प्रगट होगा? धर्म का बल तो ध्रुव के आश्रय से ही प्रगट होगा। आहाहा!

मुमुक्षु :- गुरु के उपदेश से नहीं?

पूज्य गुरुदेवश्री :- उपदेश अनन्त बार सुना। शास्त्र भी अनन्त बार पढ़ा। शास्त्र के अनन्त बार पैर छूए, जय भगवान, जय भगवान! सब राग है। अरे..! साक्षात् तीन लोक के नाथ तीर्थंकरदेव समवसरण में विराजते हैं। वहाँ इन्द्र आते हैं। वहाँ तू अनन्त बार गया था। अनन्त बार सुना है। परन्तु ध्रुव के अवलम्बन बिना प्रगट होगा कहाँ से? आहाहा! पर के आलम्बन से तो प्रगट नहीं होगा। वह तो पहले कहा न? **अपने को परद्रव्य से भिन्न पदार्थ निश्चित करके,...** आहाहा! **अपने ध्रुव ज्ञायकस्वभाव की महिमा लाकर, सम्यग्दर्शन प्रगट करने का प्रयास करना चाहिए।** यह प्रयास करना चाहिए। आहा..! मूल वस्तु को छोड़कर... मूलं नास्ति कुतो शाखा। मूल ही नहीं है, वहाँ फिर शाखा, फल, फूल कहाँ से आयेगा? आहाहा!

यहाँ वह कहते हैं, इस शब्द में तो बहुत पड़ा है। **यदि ध्रुव ज्ञायक-भूमि का...** ध्रुव ज्ञायकभूमि-नित्य ज्ञायकभूमि-त्रिकाली जिसकी सत्ता है। ऐसी सत्ता का आश्रय न हो.. आहाहा! त्रिकाली भगवान का आश्रय न हो तो **जीव साधना का बल...** मोक्ष की साधना का बल, धर्म की साधना का बल, सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्र **किसके आश्रय से प्रगट करेगा ?** आहाहा! ऐसे ही पढ़ ले तो (समझ में आये, ऐसा नहीं है)। उसमें माल भरा है। अन्यमति भी एक बार पढ़कर ऐसा हो जाए.. आहाहा! क्या है यह चीज़! जैन में किसी को खबर नहीं, पढ़े तो कुछ खबर पड़े नहीं। व्यर्थ।

यहाँ तो ऐसा कहते हैं, प्रभु एक बार सुन! तेरी चीज़ में दो चीज़ है। एक ध्रुव है, एक पर्याय है। वर्तमान अवस्था और एक त्रिकाली ध्रुव है। अब, यदि तुझे सचमुच भव से रहित होना हो तो पर्याय में ध्रुव के अवलम्बन बिना सम्यग्दर्शन प्रगट होगा नहीं। धर्म की पहली सीढ़ी.. आहाहा! धर्म की पहली भूमिका पर्याय में-अवस्था में ध्रुव के अवलम्बन बिना किसके बल से तू मोक्षमार्ग प्रगट करेगा ? मोक्षमार्ग प्रगट करने में तो ध्रुव का अवलम्बन है। आहाहा! 'थोड़ा लिखा, बहुत जानना।' आहा..!

ज्ञायक की ध्रुव भूमि में... दूसरा शब्द। ज्ञायक भगवान अन्दर चैतन्यमूर्ति प्रभु सच्चिदानन्द अनादि-अनन्त, ऐसे **ज्ञायक की ध्रुव भूमि में...** ध्रुव भूमि-ध्रुव स्थल-ध्रुव धाम। ध्रुवधाम में **दृष्टि जमने पर,...** आहाहा! ध्रुव भूमि में दृष्टि जमने पर। आहाहा! **उसमें एकाग्रतारूप प्रयत्न करते-करते,... उसमें एकाग्रतारूप प्रयत्न करते-करते, निर्मलता प्रगट होती जाती है।** दूसरा कोई उपाय है नहीं कि इतनी लक्ष्मी का खर्च किया और इतने मन्दिर बनाये और इतनी दया पाली, भगवान की इतनी माला गिनी। सब संसार (है)। राग है, सब विकल्प है। आहाहा! अरे..! यहाँ तो पुस्तक प्रकाशित हो गयी है। करीब ८०००० तो प्रकाशित हो गये हैं। यह बात कोई भी मध्यस्थ होकर पढ़े तो उसे खबर पड़े कि मार्ग तो यह है। आहाहा!

ज्ञायक की... ज्ञायक अर्थात् जाननेवाला-जानन-जाननस्वभाव। भगवन आत्मा ज्ञायक स्वभाव है। सब परवस्तु, राग भी पर, दया, दान का भाव, भक्ति का भाव भी पर (है)। एक **ज्ञायक की ध्रुव भूमि में दृष्टि जमने पर, उसमें एकाग्रतारूप प्रयत्न करते-**

करते,... आहाहा! ज्ञायकभाव में एकाग्रता करते-करते **निर्मलता प्रगट होती जाती है।** आहाहा !थोड़ी कठिन सूक्ष्म बात है, प्रभु! परन्तु मार्ग यह है। दुनिया ने ... दिया है, बेचारे को मार दिया है। यह करो, वह करो, यह करो, वह करो.. तुम्हारा कल्याण हो जाएगा। मार डाला है। शास्त्र में लेख है। मरणतुल्य कर दिया है। उसमें है, यह शास्त्र है। कौन-सी गाथा है ? २८ है। आहाहा! अमृतचन्द्राचार्य का श्लोक है। आहाहा! भगवान आत्मा कर्मसंयोग से ढका होने से राग और द्वेष, पुण्य और पाप के भाव के अस्तित्व में रमणता करने से, तू वहाँ रहने से मरण को प्राप्त हो रहा है। मरण को प्राप्त हो गया है। मानों जीव है ही नहीं। यह राग ही मैं हूँ और यही मैं हूँ। आहाहा! पुण्य और पाप, और उसका फल वही मैं हूँ, ऐसा करके... आहाहा! मरण को प्राप्त हो रहा है। भगवान आत्मा तो मरण-मानो कोई है ही नहीं। महाप्रभु है, वह तो कुछ है ही नहीं। और इस धूल में राग, पुण्य और पाप के फल में अपना मरण कर दिया। तू नहीं है। आहाहा! ऐसी बात कहाँ सुनने मिले ? अथवा सेठ लोगों को मक्खन लगाये तो पैसे खर्च करे। इसलिए मानो आहा..! पैसा खर्च करे तो मानो लाभ हुआ। धूल भी नहीं है। क्यों, कपूरचन्दभाई! यह सब सेठ है। आहा..! कहीं पाँच-पच्चीस हजार खर्च करे और ऐसा कुछ बनाये-जीवदया मण्डल, उसके प्रमुख हो। जीवदया मण्डल का प्रमुख, पचास-सौ लोगों का। हर जगह काम ले तो बहुत काम किया। प्रभु कहते हैं, प्रभु! सुन तो सही, नाथ! तेरी राग की क्रिया का अस्तित्व में तेरा अस्तित्व (मानकर) तूने तेरा मरण किया है। आहाहा! तेरी अस्ति-सत्ता पुण्य और पाप की सत्ता के उल्लास में... आहाहा! शुभ और अशुभभाव और उसका फल जो धूल-लक्ष्मी आदि, उसके उमंग में तेरी चीज़ का तूने अनादर कर दिया। आहाहा! तेरी चीज़ का मरण कर दिया। आहाहा!

वह भ्रान्ति परमगुरु श्री तीर्थंकर का उपदेश.. आहा! तीन लोक के नाथ का उपदेश सुनने पर प्रगट होता है। धर्म तब प्रगट होगा। कलश टीका है। कलश है न ? अमृतचन्द्राचार्य मुनि भावलिंगी सन्त हैं। अमृत के घर में चले गये हैं। अमृत का... आहाहा! खजाना! उसमें घुस गये हैं। वे बात करते हैं। प्रभु! तेरी अस्ति तो बड़ी अन्दर है। परन्तु तूने अभी तक तो ऐसा किया कि उसमें जो है नहीं, ऐसा पुण्य-पाप का भाव शुभ-अशुभ और उसके फल में तू कृतकृत्य हो गया, तुझे सन्तोष हो गया, तेरे आत्मा का तूने मरण कर दिया, मानो

कोई चीज़ है ही नहीं। आहाहा! इस चीज़ के आगे कोई चीज़ है नहीं। यहीं कहते हैं कि इस चीज़ के आगे दूसरी कोई चीज़ नहीं है। आहाहा!

साधक जीव की दृष्टि निरन्तर शुद्धात्मद्रव्य पर होती है,... है ? साधकजीव की-धर्मी की दृष्टि... आहाहा! जिसको मोक्ष का मार्ग साधना है, ऐसे धर्मी की दृष्टि **निरन्तर शुद्धात्मद्रव्य पर होती है,...** आहाहा! दृष्टि में तो शुद्धात्मद्रव्य ही विराजता है, दृष्टि में उसका ही उसका आदर है। आहाहा!

मुमुक्षु :- ध्रुव का आश्रय।

पूज्य गुरुदेवश्री :- ध्रुव त्रिकाली भगवान का ही अवलम्बन है, बस। आहाहा! वही पूरे आत्मा का जीवन जैसा है, वैसा मानने का सम्यग्दर्शन प्रगट होगा। आहाहा! अरेरे..!

साधक जीव की दृष्टि निरन्तर शुद्धात्मद्रव्य पर होती है, तथापि साधक जानता है सबको;... अब क्या कहते हैं ? दृष्टि द्रव्य पर-ज्ञायक पर निरन्तर है, फिर भी वह **शुद्ध-अशुद्ध पर्यायों को जानता है...** जाने सबको। शुद्ध पर्याय धर्म की प्रगट हुई, उसको भी जाने और अशुद्ध पर्याय होती है-शुभाशुभभाव राग... आहाहा! है अशुद्ध। अशुद्ध शुभाशुभराग और शुद्ध, वह मोक्ष का मार्ग, शुद्ध पर्याय। त्रिकाल के अवलम्बन से प्रगट हुई शुद्ध पर्याय। उसको भी ज्ञान जाने-पर्याय को, भले वह दृष्टि का विषय नहीं है, दृष्टि का विषय ध्रुव है, परन्तु साथ में जो ज्ञान उत्पन्न हुआ, वह अपनी वर्तमान शुद्धपर्याय को भी जानता है और वर्तमान अशुद्धपर्याय को भी जानता है। आहाहा! अशुद्धपर्याय भी धर्मी की होती है। आहाहा! अशुद्ध का दो प्रकार - शुभ और अशुभ। शुभभाव-दया, दान, भक्ति, व्रत, तप आदि। यह शुभ है, वह अशुद्ध है। और हिंसा, झूठ, चोरी, विषयभोग वासना, वह अशुभ भी अशुद्ध। अशुभ और शुभ दोनों अशुद्ध है। आहाहा!

दृष्टि तो निरन्तर शुद्धात्मद्रव्य पर होती है। धर्मी की दृष्टि तो त्रिकाली ज्ञायकस्वभाव पर दृष्टि रहती है। **तथापि साधक जानता है...** धर्मी जानता है। भले गृहस्थाश्रम में हो, **वह शुद्ध-अशुद्ध पर्यायों को जानता है...** शुद्ध को भी जानता है और अशुद्ध आ गयी, (उसे भी जानता है)। आता है, विषयवासना, स्त्री भोग.. आहा..! अरे..! लड़ाई का भाव आया।

भरत और बाहुबली। दो भाई समकिती ज्ञानी लड़ाई में आ गये। जानते हैं कि यह पर्याय आ गयी है, वह मेरी नहीं है, परन्तु मेरी कमजोरी से आ गयी है। आहाहा!

और उन्हें जानते हुए उनके स्वभाव-विभावपने का,... जो आत्मा के अवलम्बन से निर्मल सम्यग्दर्शन हो, वह स्वभाव है और पुण्य-पाप का भाव है, वह विभाव है। आहाहा! धर्मी जीव समकिती धर्म की पहली सीढ़ीवाला ध्रुव के अवलम्बन जो सम्यग्दर्शन प्रगट हुआ, उसके साथ ज्ञान हुआ, वह शुद्ध-अशुद्ध पर्याय को जानता है। **जानते हुए उनके स्वभाव-विभावपने का,...** आहाहा! **सुख-दुःखरूप वेदन का,...** साधक को आत्मा का सुख थोड़ा है और कल्पना का शुभभाव में सुख अस्थिरता का आ जाता है और अशुभ में दुःख है। शुभ में भी दुःख है और अशुभ में भी दुःख है। आहाहा! और सुख अपने में आत्मा के आश्रय से (है)। जो सुख अपना त्रिकाली ज्ञायकभाव भगवन्तस्वरूप, उसके अवलम्बन से जो दशा प्रगट हुई, वह सुख है, वह आनन्द है। बाकी सब दुःख है। पुण्य और पाप का चाहे जैसा भाव (हो), सब दुःख है। उस **सुख-दुःखरूप वेदन का,...** आहा..! उसका विवेक है, ऐसा कहते हैं। समकिती को उसका विवेक है। आहाहा! अपने स्वरूप का भी भान है और ऐसा विकारादि है, उसका भी भान है। आहाहा! **सुख-दुःखरूप वेदन का,...** देखो! यहाँ तो दुःखरूप वेदन आत्मा करता है, समकिती!

मुमुक्षु :- साधकपना है, वहाँ साधकपना होता है।

पूज्य गुरुदेवश्री :- है, साधक है। अभी पूर्ण आनन्द नहीं है। पूर्ण दुःख मिथ्यादृष्टि में; पूर्ण आनन्द केवली में और साधक में थोड़ा आनन्द और थोड़ा दुःख, दोनों हैं। आहाहा!

उनके साधक-बाधकपने का इत्यादि का विवेक वर्तता है। आहाहा! अन्तर में धर्मी को साधक की धर्म की पर्याय आत्मा के अवलम्बन से जो उत्पन्न हुई हो और बाधकपर्याय पुण्य-पाप का भाव, सुख-दुःख का वेदन.. आहाहा! **इत्यादि का विवेक वर्तता है।** ज्ञान में यह सब जानने में आता है। दृष्टि में अकेला ध्रुव है। सम्यग्दर्शन में-धर्म की प्रथम सीढ़ी में तो दृष्टि तो ध्रुव पर है। आहाहा! ध्रुव से दृष्टि कभी हटती नहीं और साथ में जो ज्ञान है, वह ज्ञान सबको जानता है। सबका विवेक करता है। है? दुःख को दुःख जानता है, सुख को सुख जानता है, विकार को विकार जानता है, अविकार को अविकार

जानता है। आहाहा! धर्मी का सच्चा दर्शनपूर्वक जो ज्ञान हुआ, वह ज्ञान दु:ख को दु:खरूप जानता है, राग को रागरूप जानता है, सुख को सुखरूप जानता है। सुख अर्थात् अपने आत्मा का सुख, हों! दुनिया में सुख कहीं नहीं है। वह सब दु:खी प्राणी है। आहाहा! **इत्यादि का विवेक वर्तता है।**

साधकदशा में साधक के योग्य अनेक परिणाम वर्तते रहते हैं... साधकदशा धर्मी की - समकिती है, आहाहा! वह **साधक के योग्य...** साधक के योग्य-लायक **अनेक परिणाम वर्तते रहते हैं परन्तु 'मैं परिपूर्ण हूँ' ऐसा बल सतत साथ ही साथ रहता है।** आहाहा! क्या कहते हैं? साधकदशा धर्मी की दशा में समकिती को **साधक के योग्य अनेक परिणाम वर्तते रहते हैं परन्तु 'मैं परिपूर्ण हूँ' ऐसा बल सतत साथ ही साथ रहता है।** मैं वस्तु तो परिपूर्ण हूँ। आहाहा! ध्रुव, जानते हैं पर्याय में। समझ में आया? ध्रुव जानता नहीं। जानते हैं पर्याय में, परन्तु पर्याय में जानते हैं किसको? ध्रुव को। नित्य रहनेवाली चीज़ को पर्याय जानती है। आहाहा! **साधकदशा में साधक के योग्य अनेक परिणाम वर्तते रहते हैं परन्तु 'मैं परिपूर्ण हूँ' ऐसा बल सतत साथ ही साथ रहता है।**

पुरुषार्थरूप क्रिया अपनी पर्याय में होती है... आहाहा! क्या कहते हैं? अपने शुद्ध ध्रुवस्वरूप की ओर जो पुरुषार्थ आया, वह पर्याय है। वह ध्रुव नहीं है। ध्रुव पर से जो पुरुषार्थ उत्पन्न हुआ, वह तो पर्याय है। आहाहा! **पुरुषार्थरूप क्रिया अपनी पर्याय में होती है...** आहाहा! त्रिकाली ज्ञायकस्वरूप भगवान आत्मा परिपूर्ण परमात्मस्वरूप... आहाहा! 'अप्पा सो परमप्पा', ऐसा तारणस्वामी में आता है। 'अप्पा सो परमप्पा' - आत्मा परमात्मा ही है। आहा..! कहाँ किसको पड़ी है। आहा..!

यहाँ कहते हैं, **पुरुषार्थरूप क्रिया अपनी पर्याय में होती है...** स्वभाव-सन्मुख का पुरुषार्थ त्रिकाली ध्रुव ओर का पुरुषार्थ, वह क्रिया पर्याय में होती है। ध्रुव में नहीं होती। आहा..! क्या कहा? अरेरे..! पुरुषार्थ जो त्रिकाली का श्रद्धा-ज्ञान-चारित्र, वह पर्याय में होता है। ध्रुव तो त्रिकाली एकरूप है। उसकी श्रद्धा-ज्ञान-चारित्र, वह पर्याय में होता है। आहाहा! और पर्याय बिना का कभी अकेला सामान्य होता नहीं। ऐसा हो तो मोक्षमार्ग बिना अकेल आत्मा रह जाए। आहाहा! समझ में आया? ऐसा उपदेश। ऐसे पर्यूषण, उसमें ऐसा उपदेश। बाहर की बातें, यह करना, उपवास करना, आठ दिन-दस दिन के बिना पानी के

करो। ऐसा दसलक्षणी पर्व का उत्सव करो, महोत्सव करो। आहाहा! अरे..! प्रभु! उसमें क्या है? उसमें राग की मन्दता हो तो कदाचित् पुण्य बँधेगा, बाकी आत्मा को कुछ लाभ बिल्कुल नहीं है, नुकसान है। आहाहा!

ऐसा सतत साथ ही साथ रहत है। **पुरुषार्थरूप क्रिया...** यह क्या कहते हैं? भाई! आत्मा जो ध्रुव है, उसमें पुरुषार्थ जो प्रगट सम्यग्दर्शन होता है तो वह पुरुषार्थ पर्याय में है, त्रिकाल में नहीं। त्रिकाल तो एकरूप है। ध्रुव तो त्रिकाल एकरूप है। पुरुषार्थ हुआ है, वह तो पर्याय में हुआ है। आहाहा! अरेरे..! ऐसी बात सुनने मिले नहीं और मनुष्यभव पशु की भाँति चला जाता है। पशु और मनुष्य में कोई अन्तर नहीं है। वह आगे कहेंगे। दोपहर को आयेगा। जो एकान्त मानता है, द्रव्य ही मानता है, पर्याय को नहीं मानता है, वह पशु है। पशु अर्थात् बध्यति इति पशु। संसार से मिथ्यात्व से बँधता है। आहाहा! और पर्याय को मानते हैं और ध्रुव को नहीं मानते हैं, वे भी पशु हैं। आहा..! वह भी पशुतुल्य एकान्त में, जैसे पशु को मात्र घास खाने की आदत है, घास के अन्दर चूरमा डालो तो भी वह घास के साथ चूरमा खाता है। चूरमा को अलग नहीं खाता। ऐसे पशु की भाँति आत्मा, तिर्यंच की भाँति राग और पुण्य को अपना आत्मा के सथ मिलाकर भोगता है। आहाहा! अरे..! कौन कहे? त्रिलोकनाथ सर्वज्ञदेव परमेश्वर इन्द्र के समक्ष यह बात करते हैं। अभी वहाँ परमेश्वर विराजते हैं। बाघ और सिंह और रीछ जंगल में से सुनने चले आते हैं। यह बात सुनने को। साधारण बात और कथा तो घर-घर में है। आहाहा!

यहाँ कहते हैं कि **पुरुषार्थरूप क्रिया अपनी पर्याय में होती है और साधक उसे जानता है,...** वीर्य को जानता है। बस! हो गया? **तथापि दृष्टि के विषयभूत ऐसा जो निष्क्रिय द्रव्य...** जो द्रव्य है न? वह निष्क्रिय है - परिणमन बिना का। **वह अधिक का अधिक रहता है।** दृष्टि में। **ऐसी साधक-परिणति की अटपटी रीति को ज्ञानी बराबर समझते हैं, दूसरों को समझना कठिन होता है।** (*श्रोता :* प्रमाण वचन गुरुदेव!)